सांस्कृतिक स्रोत एवं प्रशिक्षण केन्द्र
CENTRE FOR CULTURAL RESOURCES AND TRAINING

लघु चित्रकारी

1. भारतीय वास्तुकला
- सिंधु सभ्यता
- बौद्ध वास्तुकला
- मंदिर वास्तुकला
- हिंद-इस्लामिक वास्तुकला
- आधुनिक वास्तुकला

2. भारतीय मूर्तिकला
- सिंधु सभ्यता
- बौद्ध मूर्तिकला
- गुप्त मूर्तिकला
- मूर्तिकला के मध्यकालीन पीठ
- आधुनिक भारतीय मूर्तिकला

3. भारतीय चित्रकला
- भित्ति-चित्रकला
- लघु चित्रकारी
- आधुनिक चित्रकला

1. पाल शैली (ग्यारहवीं से बारहवीं शताब्दियां)

भारत में लघु चित्रकला के सबसे प्राचीन उदाहरण पूर्व भारत के पाल वंश के अधीन निष्पादित बौद्ध धार्मिक पाठों और ग्यारहवीं-बारहवीं शताब्दी ईसवी सन् के दौरान पश्चिम भारत में निष्पादित जैन पाठों के सचित्र उदाहरणों के रूप में विद्यमान हैं । पाल अवधि (750 ईसवी सन् से बारहवीं शताब्दी के मध्य तक) बुद्धवाद के अन्तिम चरण और भारत बौद्ध कला की साक्षी है । नालन्दा, ओदन्तपुरी, विक्रम-शिला और सोमारूप के बौद्ध महाविहार बौद्ध शिक्षा तथा कला के महान केन्द्र थे । बौद्ध विषयों से संबंधित ताड़-पत्ते पर असंख्य पाण्डुलिपियां इन केन्द्रों पर बौद्ध देवताओं की प्रतिमा सहित लिखी तथा सचित्र प्रस्तुत की गई थीं । इन केन्द्रों पर कांस्य प्रतिमाओं की ढलाई के बारे में कार्यशालाएं भी आयोजित की गई थीं । समूचे दक्षिण-पूर्व एशिया के विद्यार्थी और तीर्थयात्री यहां शिक्षा तथा धार्मिक शिक्षण के लिए एकत्र होते थे । वे अपने साथ कांस्य और पाण्डुलिपियों के रूप में पाल बौद्ध कला के उदाहरण अपने देश ले गए थे जिससे पाल शैली को नेपाल तिब्बत, बर्मा, श्रीलंका और जावा आदि तक पहुचाने में सहायता मिली । पाल द्वारा सचित्र पाण्डुलिपियों के जीवित उदाहरणों में से अधिकांश का संबंध बौद्ध मत की वज्रयान शाखा से था ।

पाल चित्रकला की विशेषता इसकी चक्रदार रेखा और वर्ण की हल्की आभाएं हैं । यह एक प्राकृतिक शैली है जो समकालिक कांस्य पाषाण मूर्तिकला के आदर्श रू के कुछ भावों को प्रतिबिम्बित करती है । पाल शैली में सचित्र प्रस्तुत बुद्ध के ताड़-पत्ते पर प्ररूपी पाण्डु लिपि का एक उत्तम उदाहरण बोदलेयन पुस्तकालय, सहस्रिका प्रज्ञापारमिता, आठ हजार पंक्तियों में लिखित उच्च कोटि के ज्ञान की एक पाण्डुलिपि है । इसे पाल राजा, रामपाल के शासनकाल के पन्द्रहवें वर्ष में चतुर्थांश में निष्पादित किया गया था । इस पाण्डुलिपि में छ: पृष्ठों पर और साथ ही दोनों काव्य आवरणों के अन्दर की ओर सचित्र उदाहरण दिए गए हैं ।

तेरहवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में मुस्लिम आक्रमणकारियों द्वारा बौद्ध मठों का विनाश करने के पश्चात पाल कला का अचानक ही अंत हो गया । कुछ मठवासी और वहां कला की विद्यमान परम्पराओं को सुदृढ़ करने में सहायता मिली ।

2. पश्चिमी भारतीय शैली (बारहवीं से सोलहवीं शताब्दी)

चित्रकला की पश्चिम भारतीय शैली गुजरात, राजस्थान और मालवा क्षेत्र में प्रचलित थी । पश्चिम भारत में कलात्मक क्रियाकलापों का प्रेरक बल जैनवाद था अजन्ता और पाल कलाओं के मामले में बौद्धवाद की भांति, जैनवाद को चालुक्य वंश के राजाओं का संरक्षण प्राप्त था जिन्हों ने 961 ईसवी सन् से लेकर तेरह शताब्दी के अन्त तक गुजरात और राजस्थान के कुछ भागों तथा मालवा पर शासन किया । राजकुमारों, उनके मंत्रियों और समृद्ध जैनव्यापारियों ने धार्मि पुण्यफल प्राप्त करने के लिए बारहवीं से सोलहवीं शताब्दी तक जैन धर्म की पाण्डु लिपियों को भारी संख्या में बनवाया था । ऐसी कई पाण्डुलिपियां ऐसे जै पुस्तकालयों (भण्डार) में उपलब्ध हैं जो पश्चिमी भारत के कई स्थानों पर पाए जाते हैं ।

इन पाण्डुलिपियों के सचित्र उदाहरण अत्यधिक विकृति की स्थिति में हैं । इस शैली में शरीर की कतिपय विशेषताओं, नेत्रों, वक्षस्थलों और नितम्बों की ए अतिशयोक्ति के विस्तार को देख पाते हैं । नाक-नक्शे की कोणीयता सहित आकृतियां सपाट हैं और नेत्र आकाश की ओर बाहर निकले हुए हैं । यह आदिम जीव शक्ति, सशक्त रेखा और प्रभावशाली वर्णों की एक कला है । लगभग 1100 से 1400 ईसवी सन् तक पाण्डुलिपियों के लिए ताड़-पत्ते का प्रयोग किया गया और बाद में इसके प्रयोजनार्थ कागज को लाया गया था । जैन ग्रथों के दो अति लोकप्रिय ग्रंथ, यथा कल्पसूत्र और कालकाचार्य-कथा को बार-बार लिखा गया और चित्रकलाओं के माध्यम से सचित्र किया गया था । कल्पसूत्र की पाण्डुलिपियों के कुछ उल्लेखनीय उदाहरण अहमदाबाद के देवासनो पादो भण्डार में हैं तकरीबन 1400 ईस्वी के कल्पसूत्र व कालकाचार्य कथा प्रिंस ऑव् वेल्स संग्रहालय, मुंबई में है । माण्डू में 1439 ईसवी सन् में निष्पादित कल्पसूत्र अब न दिल्ली के राष्ट्रीय संग्रहालय में है । कल्पसूत्र को 1465 ईसवी सन् में जौनपुर में लिखा तथा रंगा गया था ।

3. अन्य अलग-अलग शैलियां (1500-1550 ईसवी सन्)

जैसा कि कल्पसूत्र की कुछ सचित्र पाण्डुलिपियों के किनारे पर दिखाई देने वाली फारसी शैली और शिकार के दृश्यों से स्पष्ट है, पन्द्रहवीं शताब्दी दौरान चित्रकला की फारसी शैली ने चित्रकला की पश्चिम भारतीय शैली को प्रभावित करना प्रारंभ कर दिया था । पश्चिम भारतीय पाण्डुलिपियों गहरा नीला और सुनहरा रंग का प्रयोग प्रारम्भ हो जाना भी फारसी चित्रकला का प्रभाव समझा जाता है । भारत आनेवाली ये फारसी चित्रकला सचित्र पाण्डुलिपियों के रूप में थीं । इन अनेक पाण्डुलिपियों की भारत में नकल तैयार की गई थी । इस प्रकार की नकलों में प्रयुक्त कुछ रंगों व फ्रीर गैलरी ऑफ आर्ट, वाशिंगटन में और सदी के बुस्तान की एक सचित्र पाण्डुलिपि को राष्ट्रीय संग्रहालय, नई दिल्ली में देखा जा सकता है बुस्तान शैली को मालवा के सुल्तान नादिर शाह खिलजी (1500-1510 ई.) के लिए एक हाजी महमूद (चित्रकार) तथा शहसवार द्वा निष्पादित किया गया था ।

इण्डियन ऑफिस लाइब्रेरी, लन्दन में उपलब्ध निमत नामा (पाककला पुस्तक) मालवा की चित्रकला का एक सचित्र उदाहरण है । इस पाण्डुलि को मालवा के गियासलदीन खिलजी (1469-1500 ईसवी सन्) के समय में लिखना प्रारम्भ किया था । इस पाण्डुलिपि के एक अवशेष को या स्पष्ट दर्शाया गया है । इसमें दासियों को भोजन पकाते हुए और गियासलदीन खिलजी को पर्यवेक्षण करते हुए दिखाया गया है । निमत नामा शै में फारसी प्रभाव घुमावदार जैसे बादलों, फूलों से लदे वृक्षों, घास-भरे गुच्छों और पृष्ठ भूमि में फूलों से लदे पौधों, महिलाओं की आकृतियों त परिधानों में दृष्टिगोचर है । कुछ महिला आकृतियों और उनके परिधानों तथा आभूषणों एवं वर्णों में भारतीय तत्व सुस्पष्ट हैं । इस पाण्डु लिपि में ह स्वदेशी भारतीय शैली के साथ शिराज की फारसी शैली के विलयन द्वारा चित्रकला की एक नई शैली के विकास की दिशा में प्रथम प्रयास को दे सकते हैं ।

गीत-गोविन्द मेवाड़ चित्रकला की राजस्थान शैली

सोलहवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध से संबंधित चित्रकला के सर्वोत्तम उदाहरणों का प्रतिनिधित्व लघु चित्रकला 'कुल्हाकदार समूह' कहते हैं । इस समूह में 'चौरपंचाशिका'-'बिल्हण द्वारा चोर की पन्द्रह पंक्तियां, गीत उदाहरण शामिल हैं । इन लघु चित्रकलाओं की शैली की विशेषता चटकीले विषम वर्णों, प्रभावशाली और क ऐसी शंकुरूप टोपियां 'कुलहा' का प्रकट होना है जिन पर पुरुष आकृतियां पगडियां पहनती है ।

चौरपंचाशिका लघु चित्रकला का एक उदाहरण चम्पावती को कमल के फूलों के एक तालाब के निकट खड़ी संग्रह, मुम्बई में है । इसे छठीं शताब्दी के प्रथम चतुर्थांश में संभवत: मेवाड़ में निष्पादित किया गया था । इ भारत की कला की प्रारम्भिक परम्परा से लिया गया है और इस पर न तो फारसी और न ही मुगल शैली का व

लाउरचन्दा की दो पाण्डुलिपियां मुल्ला दाउद द्वारा एक अवधी प्रेमलीला की दो पाण्डुलिपियों में से एक रायलैंड्स पुस्तकालय मैनचेस्टर में है । ऐसा प्रतीत होता है कि इन्हें 1530 से 1540 ईसवी सन् के बी निमतनामा की भांति, ये फारसी और भारतीय शैलियों के एक मिश्रण को दर्शाती हैं । इस युग की दो अन्य म कि एक जैन ग्रन्थ है । इन्हें चौरपंचाशिका की शैली से संबंधित एक शैली में निष्पादित किया गया है ।

2. मुगल शैली (1560-1800 ईसवी सन्)

चित्रकला की मुगलशैली की शुरुआत को भारत में चित्रकला के इतिहास की एक युगान्तरकारी घटना समझा जाता है । मुगल साम्राज्य की स्थापना हो जाने के प चित्रकला की मुगल शैली की शुरुआत सम्राट अकबर के शासनकाल में 1560 ईसवी सन् में हुआ था । सम्राट अकबर को चित्रकला और वास्तुकला में अत्यं रुचि थी । जब वे एक बालक थे तब उन्होंने चित्रकला में शिक्षा ली थी । उनके शासन के प्रारम्भ में दो फारसी अध्यापकों मीर सयद अली और अब्दुतल समद

की देखरेख में एक शिल्पशाला की स्थापना की गई थी, जिन्हें मूल रूप से सम्राट अकबर के पिता हुमायूं ने नौकरी दी थी । समूचे भारत में बड़ी संख्या में भार कलाकारों को फारसी उस्तादों के अधीन काम पर रखा गया था ।

मुगल शैली का विकास चित्रकला की स्वदेशी भारतीय शैली और फारसी चित्रकला की सफाविद शैली के एक उचित संश्लेषण के परिणामस्वरूप हुआ था । प्र के घनिष्ठ अवलोकन और उत्तम तथा कोमल आरेखण पर आधारित सुनम्य प्रकृतिवाद, मुगल शैली की एक विशेषता है । यह सौन्दर्य के उच्च गुणों से परिपूर्ण है प्राथमिक रूप से वैभवशाली और निरपेक्ष है ।

क्लीवलैण्ड कला संग्रहालय (यू एस ए) में तूती-नामा की एक सचित्र पाण्डुलिपि मुगल शैली की प्रथम कलाकृति प्रतीत होती है । इस चित्रकला की शैली में म् शैली अपने विकास-काल में दिखाई देती है । इसके शीघ्र पश्चात 1564-69 ईसवी सन् के बीच हमज़ानामा के रूप में एक अति महत्वाकांक्षी परियोजना पूरी की थी जिसमें कपड़े पर सत्रह खण्डों में मूल रूप से 1400 पृष्ठ शामिल हैं, प्रत्येक पृष्ठ का आकार लगभग 27"X20" है । हमज़ानामा की शैली तूती-नामा की अ अधिक विकसित और परिष्कृत है ।

कपड़े पर हमज़ा-नामा रेखाचित्र
मुगलकालीन चित्रकला

हमज़ानामा के सचित्र उदाहरण स्विटजरलैण्ड के एक निजी संग्रह में हैं । ये एक मण्डप की ऊपरी मंजिल से एक बहुतलीय के साथ दिखाते हैं । इस लघु चित्रकला में हम यह देख सकते हैं कि वास्तुकला भारतीय फारसी है, वृक्षों की किस्मों को प्र और महिला आकृतियों का अनुकूलन राजस्थान की प्राचीन चित्रकला से किया गया है । महिलाओं ने चार कानों वाले नोकदार पुरुषों ने जो पगड़ियां पहनी हुई हैं, वे छोटी तथा कसी हुई हैं और अकबर युग की प्रारूपी हैं । आगे चल कर मुगल शै चित्रकला से प्रभावित हुई और इसमें छायाकरण और परिप्रेक्ष्य जैसी पश्चिमी तकनीकों में से कुछ को आत्मसात किया गया ।

अकबर के युग के दौरान चित्रित अन्य महत्वपूर्ण पाण्डुलिपियां हैं- ब्रिटिश संग्रहालय, लन्दन में 1567 की सादी गुलिस्तां, स्कूल ऑफ ओरिएंटल एण्ड अफ्र स्टडीज, लन्दन विश्वविद्यालय में 1570 की अनवरी-सुहावली (किस्से कहानी की एक पुस्तक) रॉयल एशियाटिक सोसायटी लाइब्रेरी में सादी की एक अन्य गुं दीवान जिसकी 1581 में मोहम्मद हुसैन अल-कश्मीरी ने फतेहपुर सीकरी में एक प्रति तैयार की, हाफिज के बिब्लिओथिक नेशनल में कवि आमिर शाही क दीवान, जिनमें से एक ब्रिटिश संग्रहालय तथा चेस्टनर बिट्टी पुस्तकालय डबलिन में हैं और दूसरी चेस्टिर बिट्टी पुस्तकालय के फारसी अनुभाग में है । तूती-नाम अन्य पाण्डुलिपि इसी पुस्तकालय में हैं । जयपुर महाराजा संग्रहालय, जयपुर के रज़मनामा (महाभारत का फारसी अनुवाद) बुटेलियन पुस्तकालय में 1595 की की बहरिसतां, ब्रिटिश संग्रहालय में दराब-नामा, विक्टोरिया और एल्बर्ट संग्रहालय, लन्दन में अकबर-नामा (लगभग 1600 ईसवी), तेहरान में गुलिस्तां पुस्तकाल 1596 ईसवी सन् की तारीख-ए-अल्फी, अनेक बाबर-नामा, सोलहवीं शताब्दी के अन्तिम दशक में निष्पादित एक पाण्डुलिपि, खुदाबक्श- पुस्तकालय, पट तवारीख-ए-खानदान तैमूरिया, चेस्टनर बिट्टी पुस्तकालय, डबलिन में 1602 की योग वाशिष्ठ, आदि । इसके अतिरिक्त अकबर के युग में राजमहल, आखेट के और प्रतिकृतियों की अनेक चित्रकलाएं भी निष्पादित की गई थीं ।

अकबर के राजदरबार के चित्रकारों की एक सूची में बड़ी संख्या में नाम शामिल हैं । पहले जिन दो फारसी चित्रकारों का उल्ले कुछ हैं - दसवंत मिसकिना, नन्हा , कन्हा , बासवान, मनोहर, दौलत, मंसूर, केसू, भीम गुजराती, धर्मदास, मधु, सूरदास, लाल,

जहांगीर के अधीन चित्रकला ने अधिकाधिक आकर्षण, परिष्कार और गरिमा प्राप्त की । उन्हें प्रकृति के प्रति अधिक आकर्षण था में प्रसन्नता होती थी । इनके युग में सचित्र उदाहरण देकर स्पष्ट की गई कुछ महत्वपूर्ण पाण्डुलिपियां हैं- अयार-ए-दानिश नामव पन्नों का संग्रह कोवासजी जहांगीर संग्रह, मुम्बई और चेस्टनर बिट्टी पुस्तकालय, डबलिन में हैं, और अनवर-ऐ-सुनावली, ब्रिटि

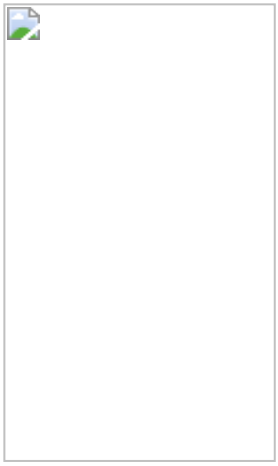

जहांगीर का चित्र भित्तिचित्र
मुगलशैली की चित्रकला

पुस्तक है । इन दोनों को 1603-10 के बीच निष्पादित किया गया था, गुलिस्तां में कुछ लघु चित्रकलाएं और हफीज़ का प
अतिरिक्त, इस काल के दौरान दरबार के दृश्यों, प्रतिकृतियों, पक्षियों, पशुओं और पुष्पों का अध्ययन भी किया गया था । जहांगीर
बिशन दास, मनोहर, गोवर्धन, बालचन्द, दौलत, मुखलिस, भीम और इनायत हैं ।

जहांगीर की प्रतिकृति जहांगीर के युग के दौरान निष्पादित लघु चित्रकलाओं का एक प्रतीकात्मक उदाहरण है । यह लघु चित्रकल
को अपने दाहिने हाथ में विर्जिन मेरी के एक चित्र को पकड़े हुए दिखाया गया है । यह प्रतिकृति अपने उत्कृष्ट आरेखण और परिष्
। फूलों के डिजाइनों से सजे हुए किनारों पर सुनहरे रंग का उदारतापूर्वक प्रयोग किया गया है । किनारों पर फारसी शैली दिखाई
मुगल सम्राट के उदाहरण का पालन करते हुए, दरबारियों और प्रान्तीय अधिकारियों ने भी चित्रकला को संरक्षण प्रदान किया
कलाकारों को कार्य सौंपा लेकिन उन्हें उपलब्ध कलाकार निम्न कोटि के थे जो राजसी कलागृह में रोजगार पाने में सक्षम नहीं थे ।
थी । इन कलाकारों की कला-कृतियों को 'लोकप्रिय मुगल' या 'प्रान्तीय मुगल' चित्रकला की संज्ञा दी गई है । चित्रकला की इस श
हैं लेकिन ये हैं निम्न कोटि की हैं । लोकप्रिय मुगल चित्रकला के कुछ उदाहरण हैं-1616 ईसवी सन् की रज़म-नामा की एक श्
और लगभग 1610 ईसवी सन् की रामायण की एक शृंखला जो कि अनेक भारतीय और विदेशी संग्रहालयों में उपलब्ध हैं ।

सत्रहवीं शताब्दी के प्रारम्भ में रामायण की एक शृंखला की प्रतीकात्मक लोकप्रिय मुगल शैली में एक उदाहरण राष्ट्रीय संग्रहालय, नई दिल्ली में है । इसमें लं
रावण के सैनिकों के बीच लड़ाई को दिखाया गया है । राम अपने भाई लक्ष्मण के साथ अग्रभाग में बाईं ओर दिखाई दे रहे हैं जबकि रावण अपने राजमहल में
साथ सुनहरे किले में विचार-विमर्श करते हुए दिखाई दे रहा है । आरेखण अच्छा है लेकिन उतना परिष्कृत नहीं है जैसा राजसी मुगल चित्रकला में देखने को मि
मुखाकृति, दानव, वृक्ष और शैलों की अभिक्रिया सभी मुगल अन्दाज के हैं । इस लघु चित्रकला की विशेषता युद्ध के दृश्यों में सृजित कार्रवाई की भावना और
है, शाहजहां के अधीन मुगल चित्रकला ने अपने अच्छे स्तर को बनाए रखा तथापि उनके राज्य की अन्तिम अवधि के दौरान शैली परिपक्व हो गई थी । उ
चित्रकला पर पर्याप्त ध्यान दिया था । उनके समय के जाने-माने कलाकार विचित्र, चैतरमन, अनूप चत्तर, समरकन्द का मोहम्मद नादिर, इनायत और मकर है
अतिरिक्त, तपस्वियों और रहस्यवादियों के समूहों को दर्शाने वाली अन्य चित्रकलाएं और अनेक निदर्शी पाण्डुलिपियां भी इस अवधि के दौरान निष्पादित क
पाण्डुलिपियों मे ध्यान देने योग्य कुछ उदाहरण हैं : गुलिस्तां तथा सादी का बुस्तान, सम्राट के लिए उनके शासनकाल के प्रथम और द्वितीय वर्ष में प्रति तैयार की
में शाहजहां नामा (1657) ।

राष्ट्रीय संग्रहालय के संग्रह में एक लघु चित्रकला सूफियों की एक सभा को चित्रित करती हैं । सूफी खुले स्थान पर बैठे हुए हैं और चर्चा में व्यस्त हैं, यह शाहजहां
शैली के ग्रहणशील प्रकृतवाद को प्रदर्शित करती है । आरेखण परिष्कृत है और वर्ण फीके हैं, पृष्ठभूमि हरी है तथा आकाश सुनहरे रंग का है । किनारे सुनह
अभिकल्पों को दर्शाते हैं । यह लघु कला-कृति लगभग 1650 ईसवी की है ।

औरंगजेब अति धर्मनिष्ठ था, इसलिए कला को प्रोत्साहित नहीं करता था । इस अवधि के दौरान चित्रकला के स्तर में गिरावट आई और इसकी पूर्ववर्ती गुणवत्ता
प्रान्तीय राजदरबारों में चले गए ।

बहादुरशाह के शासनकाल में, औरंगजेब द्वारा अवहेलना के पश्चात् मुगल चित्रकला का पुनरुद्धार हुआ, जो शैलीगत सुधार को दर्शाती है ।

1712 ईसवी सन् के पश्चात् मुगल बादशाहों के अधीन मुगल चित्रकला में पुन: कमी आने लगी थी । हालांकि इसका बाह्य रूप वैसा का वैसा रखा गया, फिर
की अन्तर्निहित गुणवत्ता को खो दिया ।

3. दक्कनी शाखा (लगभग 1560-1800 ईसवी सन्)

जबकि दक्कन से मुगल-पूर्व चित्रकला के किसी भी विद्यमान उदाहरण की कोई जानकारी नहीं है, फिर भी निश्चित रूप से यह माना जा सकता है कि यहां चि
शैली ने उन्नति की और उत्तर भारत में मुगल शैली के विकास में महत्वपूर्ण योगदान दिया । सोलहवीं और सत्रहवीं शताब्दियों के दौरान दक्कन में चित्रकल
अहमदनगर, बीजापुर ओर गोलकुण्डा में थे । दक्कन में प्रारम्भ में चित्रकला का विकास मुगल शैली से स्वतंत्र रूप में होता रहा । बाद में सत्रहवीं और अठारह
पर मुगल शैली का अधिकाधिक प्रभाव पड़ा था ।

1. अहमदनगर

अहमदनगर चित्रकला के प्रारम्भिक उदाहरण अहमदनगर के हसन निज़ाम शाह प्रथम (1553-1565) और उनकी रानी की प्रशंसा में लिखी गई कविताओं के
हैं। यह पाण्डुलिपि तारीफ-इन-हुसैन शाही के नाम से जानी जाती है और इसका संबंध 1565-69 की अवधि से है तथा इसे भारत इतिहास समाशोधक मण
रखा गया है । एक सचित्र उदाहरण में राजा को राजसिंहासन पर बैठे हुए दिखाया गया है और अनेक महिलाएं उनका ध्यान रख रही हैं । चित्रकला में दृष्टिगोच

संबंध मालवा की उत्तरी परम्परा से है । चोली और बंधी हुई और एक फुंदने के रूप में समाप्त होती हुई लम्बी-चोटी उत्तरी परिधान हैं लेकिन शरीर से होता हु
दक्षिण का एक फैशन है, चित्रकला में प्रयोग किए गए वर्ण भड़कीले तथा चटकीले हैं और ये उत्तरी चित्रकला में प्रयुक्त वर्णों से भिन्न हैं । उच्च क्षितिज,
भूदृश्यांकन में फारसी प्रभाव को देखा जा सकता है।

अहमदनगर चित्रकला के कुछ अन्य अच्छे उदाहरण हैं- लगभग 1590 ईसवीं सन् की ''हिंडोला राग'' और अहमदनगर के बुरहान निज़ाम शाह द्वितीय के प्र
ईसवीं सन्) और मलिक अम्बेर के लगभग 1605 ईसवी सन् के प्रतिरूप जो राष्ट्रीय संग्रहालय, नई दिल्ली और अन्य संग्रहालयों में उपलब्ध हैं ।

बीजापुर का राजकुमार डक्कनी शैली की चित्रकला

2. बीजापुर

बीजापुर में अली आदिल शाह प्रथम (1558-80 ईसवी सन्) और उनके उत्तराधिकारी इब्राहिम द्वितीय (1580-162
चेस्टनर बिट्टी पुस्तकालय डबलिन में संरक्षित नजूम-अल-उलूम (विज्ञान के सितारे) के नाम से ज्ञात एक विश्वकोश को
सन् में चित्रित किया गया था । इस पाण्डुलिपि में 876 लघु चित्रकलाएं हैं । इन सचित्र उदाहरणों में दिखाई देने वा
भारतीय वस्त्र पहने हुए हैं । यहां प्रस्तुत सचित्र उदाहरणों की लघु चित्रकलाओं में से एक 'समृद्धि का राजसिंहासन'
चित्रकला का प्रभाव है । भड़कीले रंगों की योजना, ताड़ के वृक्ष, पशु और पुरुष तथा महिलाएं सभी का संबंध दक्कनी प
के प्रचुर मात्रा में प्रयोग, फूलों के कुछ पौधे और अरबस्कोंष को फारसी परम्परा से लिया गया है ।

इब्राहीम द्वितीय (1580-1627 ईसवी सन्) एक संगीतकार थे और इसी विषय पर नवरसनामा नामक एक पुस्तक भ
चित्रकलाओं की अनेक चित्रकलाएं विभिन्न संग्रहालयों और निजी संग्रहों में रखी गई थीं । इब्राहीम द्वितीय के कुछ समका

3. गोलकुण्डां

गोलकुण्डा कलाकृतियों के रूप में चिह्नित सबसे प्रारम्भिक चित्रकलाएं ब्रिटिश संग्रहालय, लन्दन में 1590 ईसवी सन् की पांच आकर्षक चित्रकलाओं का एक
मोहम्मद कुली कूता शाह (1580-1611) गोलकुण्डा के समय में चित्रांकित किया गया था । ये कंपनी का मनोरंजन करने वाली नृत्य करती हुई नर्तकियों को द
चित्रकलाओं में से एक राजा को उसके राजदरबार में दिखाती है जहां राजा नृत्य को देख रहे हैं । राजा ने श्वेत मुस्लिम का लबादा पहना हुआ है जिस पर लम
कशीदाकारी की गई है जो कि गोलकुण्डा के राजदरबार से सहयोजित एक प्ररूपी परिधान है। भवन, परिधान, आभूषण और पोत आदि को चित्रित करते सम
का व्यापक रूप से प्रयोग किया गया है ।
गोलकुण्डा चित्रकला के अन्य उत्कृष्ट उदाहरण हैं- चेस्टनर बिट्टी पुस्तकालय, डबलिन में लगभग 1605 ईसवी सन् की ''मैना पक्षी के साथ महिला'', ब्रिटि
लंदन में एक सूफी कवि की एक सचित्र पाण्डुलिपि और दो प्रतिकृतियां जिनमें एक कवि को एक उद्यान में दिखाया गया है और एक सुरुचिपूर्ण पोषाक पहने हु
सुनहरी चौकी पर बैठा हुआ है तथा पुस्तक पढ़ रहा है । इन दोनों पर ललित कला संग्रहालय, बोस्टन में एक कलाकार मोहम्मद अली ने हस्ताक्षर किए हैं ।
प्रारम्भिक दक्षिण चित्रकला ने, जैसा कि महिला की आकृतियों और परिधानों की अभिक्रिया से स्पष्ट है, मालवा में फल-फूल रही मुगल-पूर्व चित्रकला की उत्तर
और विजयनगर की भित्ती की दक्षिणी परम्परा के प्रभावों को आत्मसात कर लिया था । क्षितिज, सुनहरा आकाश और भूदृश्यांकन की अभिक्रिया के दौरान फा
के प्रभाव को देखा गया है, ये रंग भड़कीले और चमकीले हैं तथा उत्तरी चित्रकला के रंगों से भिन्न हैं । प्रारम्भिक दक्षिणी चित्रकला की परम्परा अहमदनगर,
गोलकुण्डा के दक्कनी सल्तनतों के लुप्त होने के पश्चात् भी लम्बे समय तक जारी रही ।

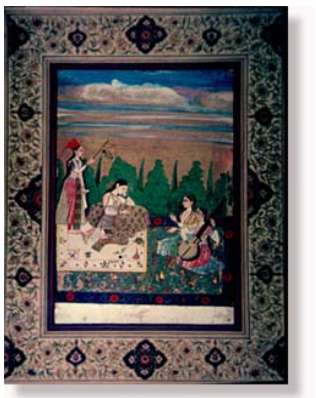

4. हैदराबाद

1724 ईसवीं सन् में मीर कुमारुद्दीन खान (चिन कुलिक ख़ान) निज़ाम-उल-मुल्क द्वारा असफ़-जुही राजवंश की नींव रख
औरंगजेब के समय में दक्कन में जाकर वहीं बसने वालों और वहीं संरक्षण की मांग करने वाले उनके मुगल चित्रकार, दक्क
और अन्य केन्द्रों पर विभिन्न शैलियों के प्रभाव व विकास के मुख्य कारक थे । अठारहवीं और उन्नीसवीं शताब्दियों की दक्क
परिधानों, आभूषण, वनस्पति, जीव-जन्तु , भूदृश्यांकन और वर्णों की अभिक्रिया में देखी जाती हैं ।
एक राजकुमारी को उसकी दासियों के साथ दिखाने वाली एक लघु चित्रकला, हैदराबाद चित्रकला विद्यालय का एक प्रत
हुए पूर्णतया सुसज्जित छज्जे पर लेटी हुई है । इस चित्रकला की शैली सजावटी है । हैदराबाद की चित्रकला की भड़क
प्ररूपी विशेषताओं को लघु चित्रकला में देखा जा सकता है । इसका संबंध अठारहवीं शताब्दी के तृतीय चतुर्थांश से हैं ।

सेविका के साथ महिला विलावल
रागिणी 18 वीं शताब्दी ईसवीं सन्

5. तंजावुर

अठारहवीं शताब्दी के अन्त और उन्नीसवीं शताब्दी के दौरान, चित्रकला की एक शैली की विशेषताएं सुदृढ़ आरेखण, छायाकरण की तकनीकें और अभिवृद्धि वर्णों का प्रयोग करना थीं, जिसने दक्षिण भारत के तंजावुर में उन्नति की ।
राष्ट्रीय संग्रहालय के संग्रह मे तंजावुर चित्रकला का एक प्रतीकात्मक उदाहरण उन्नीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ का एक सचित्र काष्ठ फलक है जिस पर राम के रा दर्शाया गया है । इस दृश्य को व्यापक रूप से सुसज्जित मेहराबों के नीचे मूर्त रूप दिया गया है । राजसिंहासन पर मध्य में राम और सीता बैठे हुए हैं, राम के अ महिला उनकी देखभाल कर रहे हैं । बाएं और दाहिने पैनलों पर ऋषि, राजदरबारी और राजकुमार दिखाई दे रहे हैं । अग्रभाग में हनुमान, सुग्रीव हैं जिन्हें सम्म रहा है तथा दो अन्य वानर एक बक्से को खोल रहे हैं जिसमें संभवत: उपहार हैं । इसकी शैली सजावटी है और चटकीलें रंगों का प्रयोग तथा अलंकरी साजो विशेषताएं हैं । लघु चित्रकला में जो शंकुरूप मुकुट दिखाई दे रहा है, वह तंजौर चित्रकला की एक प्रतीकात्मक विशेषता है।

गीत-गोविन्द मेवाड़ चित्रकला की
राजस्थान शैली

6. मध्य भारत और राजस्थानी शैली (सत्रह से उन्नीसवीं शताब्दियां)

प्राथमिक रूप से पंथ-निरपेक्ष मुगल चित्रकला से भिन्न, मध्य भारत, राजस्थानी और पहाड़ी क्षेत्र आदि की चित्रकला की भारतीय महाकाव्यों, पुराणों जैसे धार्मिक ग्रंथों, संस्कृत और अन्य भारतीय भाषाओं में प्रेम भरी कविताओं, भारतीय लोक प्रेरणा मिली है । वैष्ण व, शैव और शक्ति के सम्प्रदायों ने इन स्थानों की चित्रकला पर अत्यधिक प्रभाव डाला हैं । इन जिसने संरक्षकों और कलाकारों को प्रेरित किया। रामायण, महाभारत, भागवत, शिव पुराण, उषा अनिरुद्ध, जयदेव का केशवदास की रसिकप्रिया, बिहारी सतसई और रागमाला, आदि के विषयों ने चित्रकार को एक अति समृद्ध क्षेत्र उपलब्ध कलात्मक कुशलता और समर्पण से महत्वपूर्ण योगदान दिया है ।

सोलहवीं शताब्दी में मध्य भारत और राजस्थान में पश्चिमी भारत और चौरपंचाशिका शैलियों के रूप में आदिम कला की परम्पराएं पहले से ही विद्यमान थी शताब्दी के दौरान चित्रकला की विभिन्न शैलियों के उद्गम तथा संवृद्धि के लिए एक आधार के रूप में कार्य किया है । सोलहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध और सत्रहवीं राजस्थान में शान्तिपूर्ण स्थिति थी । राजपूत शासकों ने धीरे-धीरे मुगलों के आधिपत्य को स्वीकार कर लिया था और उनमें से कुछ ने मुगल राजदरबार में म कब्जा कर लिया था । कुछ शासकों ने मुगलों के साथ वैवाहिक संबंध भी बना लिए थे । मुगल सम्राटों द्वारा स्थापित उदाहरण का अनुकरण करते हुए कुछ कलाकारों को अपने राजदरबारों में नियोजित भी कर दिया था । कम योग्यता वाले ऐसे कुछ मुगल कलाकार जिनकी अब मुगल सम्राटों को कोई आवश्यकता और अन्य स्थानों पर चले गए थे तथा उन्हें स्थानीय राजदरबारों में रोजगार मिल गया था । यह माना जाता है कि मुगल शैली के लोकप्रिय रूपान्तर, जिसे ये चित्र पर ले गए थे, ने वहां चित्रकला की पहले से विद्यमान शैलियों को प्रभावित किया जिसके परिणामस्वरूप सत्रहवीं और अठारहवीं शताब्दियों में राजस्थान त चित्रकला की अनेक नई शैलियों का उद्भव हुआ था । इनमें से चित्रकला के महत्वपूर्ण विद्यालय मालवा, मेवाड़, बूंदी-कोटा, आमेर जयपुर, बीकानेर, मारवाड़ थे ।

मालवा सहित चित्रकला की राजस्थानी शैली की विशेषताएं मजबूत एवं प्रभावशाली आरेखण और विषम वर्ण हैं । परिप्रेक्ष्य को एक प्राकृतिक दृष्टि से दिखाने के किए बिना ही आकृतियों की अभिक्रिया चौरस है । कभी-कभी चित्रकला की सतह को अलग-अलग वर्णों के अनेक उप-खण्डों में विभाजित कर दिया जाता है त अन्य दृश्य से पृथक किया जा सके । आरेखण के परिष्कोरण में मुगल प्रभाव दिखाई देता है और आकृतियों तथा वृक्षों में प्रकृतिवाद के कुछ तत्वों को डाला गया प्रत्येक विद्यालय की अपनी विशिष्ट किस्म, परिधान, भूदृश्यांकन और वर्ण योजना होती है ।

रावण सीता से भिक्षा मांगते हुए मालवा चित्रकला की राजस्थान शैली

1. मालवा

मालवा शैली में निष्पादित की गई कुछ महत्वपूर्ण चित्रकलाएं हैं- 1634 ईसवी सन् की रसिकप्रिया की एक स्थान पर चित्रित की गई, अमरू शतक की एक शृंखला और 1680 ईसवी सन् में माधो दास नामक एक व की एक शृंखला । इनमें से कुछ राष्ट्रीय संग्रहालय, नई दिल्ली में उपलब्ध हैं । इसी समय की एक अन्य अम 1650 ईसवी सन् की एक रागमाला शृंखला भारत कला भवन, बनारस में उपलब्ध है । मालवा में चित्रकला 1680 ईसवी सन् की रागमाला की एक शृंखला का उदाहरण मेघ राग का निरूपण करता है । इस च संगीतकारों द्वारा बजाए जा रहे संगीत की थाप पर एक महिला को नृत्य करते हुए दिखाया गया है । इस दृश्य हुआ है और बिजली चमक रही है तथा वर्षा को श्वेत बिन्दु रेखाओं द्वारा दिखाया गया है । बादलों की श्य जिससे लघु चित्रकला के चित्रीय प्रभाव में वृद्धि होती है । आलेख सबसे ऊपर नागरी में लिखा गया है । इस का प्रयोग, मुगल चित्रकला के प्रभाव के कारण आरेखण का परिष्करण और काले फुंदनों तथा धारीदार लहं

2. मेवाड़

मेवाड़ चित्रकला का प्रारम्भिक उदाहरण 1605 ईसवीं सन् में मिसर्दी द्वारा उदयपुर के निकट एक छोटे से स्थान चावंद में चित्रित की गई रागमाला की एक शृंखला की अधिकांश चित्रकलाएं श्री गोपी कृष्ण कनोड़िया के संग्रह में हैं । रंगमाला की एक अन्य शृंखला को साहिलदीन ने 1628 ईसवीं सन् में चित्रित किया की कुछ चित्रकलाएं जो पहले खंजाची संग्रह के पास थी जो अब राष्ट्रीय संग्रहालय, नई दिल्ली में हैं । मेवाड़ चित्रकला के अन्य उदाहरण हैं- 1651 ईसवी सन् तृतीय पुस्तक (अरण्य काण्ड) का सचित्र उदाहरण जो सरस्वती भण्डार, उदयपुर में हैं, 1653 ईसवी सन् की रामायण की सातवीं पुस्तक (उत्तर काण्ड) जो कि लन्दन में है और लगभग इसी समय की रागमाला चित्रकला की एक शृंखला राष्ट्रीय संग्रहालय, नई दिल्ली में है । 1628 ईसवी सन् में साहिबदीन द्वारा चित्रित शृंखला का एक उदाहरण अब राष्ट्रीय संग्रहालय में है जो ललित रागिनी को दर्शानेवाली एक चित्रकला है । नायिका एक ऐसे मण्डप के नीचे एक बिस्तर पर उसकी आंखें बन्द हैं जिसमें एक द्वार भी है । एक दासी उसके चरण दबा रही है । नायक बाहर खड़ा है, उसके हाथ में एक पुष्पमाला है । अग्रभाग में एक सखि दूल्हा मण्डप की सीढियों के निकट बैठा हुआ है । आरेखण मोटा है और वर्ण चमकीले तथा विषम हैं । चित्रकला का आलेख पीत भूमि पर सबसे ऊपर श्याम रं है ।

राग मेघ-मल्हार, बूंदी चित्रकला की राजस्थान शैली

3. बूँदी

चित्रकला की बूँदी शैली मेवाड़ के अति निकट है लेकिन बूँदी शैली गुणवत्ता में मेवाड़ शैली से आगे है । बूँदी में चित्रकला ल रागिनी को दर्शाते हुए एक चित्रकला इलाहाबाद संग्रहालय में हैं जो बूँदी चित्रकला का एक प्रारंभिक उदाहरण है । इसके कु एक सचित्र पाण्डुलिपि और राष्ट्रीय संग्रहालय, नई दिल्ली में रसिकप्रिया की एक शृंखला ।
सत्रहवीं शताब्दी के अन्त में रसिकप्रिया की एक शृंखला में एक दृश्य है जिसमें कृष्ण एक गोपी से मक्खन लेने का प्रयास कर एक वस्त्र का टुकड़ा और कुछ अन्य वस्तुएं हैं लेकिन मक्खन नहीं है तो वह यह समझ जाता है कि गोपी ने उससे छल वि जिसे तरंगी रेखाओं द्वारा चित्रित किया गया है, नदी में फूल और जलीय पक्षी दिखाई दे रहे हैं । इस चित्रकला का चमक चित्रकला से स्पष्ट होता है बूँदी चित्रकला के विशेष गुण भड़कीले तथा चमकीले वर्ण, सुनहरे रंग में उगता हुआ सूरज, किर वृक्ष हैं । चेहरों के परिष्कृत आरेखण में मुगल प्रमाण और वृक्षों की अभिक्रिया में प्रकृतिवाद का एक तत्व दृष्टिगोचर है । गया है ।

4. कोटा

बूँदी शैली से काफी कुछ सदृश्य चित्रकला की एक शैली अठारहवीं शताब्दी के अन्त में और उन्नीसवीं शताब्दी के दौरान बूँदी के निकट एक स्थान कोटा में बाघ और भालू के आखेट के विषय कोटा में अति लोकप्रिय थे । कोटा की चित्रकलाओं में अधिकांश स्थान पर्वतीय जंगल ने ले लिया है जिसे असाधारण आकर्ष किया गया है ।

जयपुर चित्रकारी चित्रकला की राजस्थान शैली

5. आमेर-जयपुर

आमेर राज्य के मुगल सम्राटों से घनिष्ठतम संबंध थे । सामान्यत: यह माना जाता है कि सत्रहवीं शताब्दी के प्रारम्भ में आमेर विद्यालय की स्थापना हुई । बाद में अठारहवीं शताब्दी में कलात्मक क्रियाकलाप का केन्द्र नई राजधानी जयपुर चला गय प्रतिकृतियां और अन्य विषयों पर लघु चित्रकलाएं हैं जिनका श्रेय निश्चित रूप से जयपुर शैली को जाता है ।

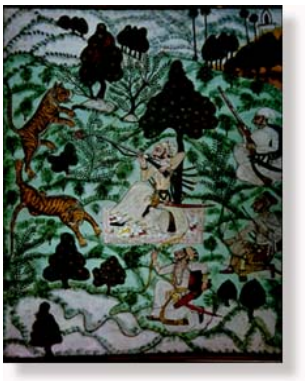

मारवाड़ चित्रकला, चित्रकला की राजस्थान शैली

6. मारवाड़

मारवाड़ में चित्रकला के प्रारम्भिक उदाहरणों में से एक 1623 ईसवी सन् में वीरजी नाम के एक कलाकार द्वारा मारवाड़ जो कुमार संग्राम सिंह के संग्रह में है । लघु चित्रकलाओं को एक आदिम तथा ओजस्वी लोक शैली में निष्पादित किया जाता प्रतिकृतियों, राजदरबार के दृश्यों , रंगमाला की शृंखला और बड़ामास, आदि को शामिल करते हुए बड़ी संख्या में लघु चित्र में पाली, जोधपुर और नागौर आदि जैसे चित्रकला के अनेक केन्द्रों पर निष्पादित किया गया था ।

7. बीकानेर

बीकानेर उन राज्यों में से एक था जिनके मुगलों के साथ घनिष्ठ संबंध थे । सत्रहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में कुछ मुगल कलाकारों को बीकानेर के राजदरबार और ये चित्रकला की एक ऐसी नई शैली को प्रारम्भ करने के प्रति उत्तरदायी थे जिसकी मुगल और दक्कनी शैलियों से काफी समानता थी । लगभग 1650 राजा कर्ण सिंह ने एक महत्वपूर्ण कलाकार अली रज़ा 'दिल्ली के उस्ताद' को नियोजित किया था । बीकानेर के राजदरबार में कार्य करने वाले कुछ अन्य असाध और उनका सुपुत्र शाहदीन थे ।

राधा और कृष्ण किशनगंज चित्रकला की राजस्थान शैली

8. किशनगढ़

अठारहवीं शताब्दी के दूसरे चतुर्थांश के दौरान, राजा सावंत सिंह (1748-1757 ईसवी सन्) के संरक्षणाधीन किशनगढ़ विकास हुआ था । राजा सावंत सिंह ने नागरी दास के कल्पित नाम से कृष्ण की प्रशंसा में भक्तिपूर्ण काव्य लिखा था । दुर्भा में उपलब्ध हैं । ऐसा माना जाता है कि इनमें से अधिकांश की रचना उस्ताद चित्रकार निहाल चन्द ने की थी जो अपनी कल दृश्य प्रतिभाओं का सृजन करने में सक्षम रहे हैं । कलाकार ने छरहरे शरीरों और सुंदर नेत्रों के साथ मानव आकृतियों को न में किशनगढ़ विद्यालय की एक सुन्दर लघु चित्रकला को यहां सचित्र प्रस्तुत किया गया है । यह संध्या में कृष्ण के अपने ग ग्रामीण दृश्य को चित्रित करती है । इस चित्रकला की विशेषता में उत्कृष्ट आरेखण, मानव आकृतियों और गायों का सुन्दर प्र वास्तुकला को दर्शाते हुए भूदृश्यांकन का एक विशाल परिदृश्य शामिल हैं । कलाकार ने कई आकृतियों को लघु चित्रकला मे का आन्तरिक किनारा सुनहरा है । इसे अठारहवीं शताब्दी के मध्य का माना जाता है तथा यह किशनगढ़ के प्रसिद्ध कलाका

5 पहाड़ी शैली (सत्रह से उन्नीसवीं शताब्दी)

पहाड़ी क्षेत्र में वर्तमान हिमाचल प्रदेश राज्य , पंजाब के कुछ निकटवर्ती क्षेत्र, जम्मू और कश्मीर राज्य में जम्मू क्षेत्र और उत्तर प्रदेश में गढ़वाल शामिल हैं। इ समूचे क्षेत्र को छोटे-छोटे राज्यों में विभाजित किया गया था तथा राजपूत राजकुमारों का इन पर शासन था जो प्राय: कल्याणकारी कार्यों में व्यस्त रहते थे । सत्रह शताब्दी के उत्तरार्द्ध से लेकर उन्नीसवीं शताब्दी के लगभग मध्य तक ये राज्य महान कलात्मक क्रियाकलापों के केन्द्र थे ।

1. बशोली

पहाड़ी क्षेत्र में चित्रकला का प्रारम्भिक केन्द्र बशोली था जहां राजा कृपाल पाल के संरक्षणाधीन एक कलाकार जिसे देवीदास नाम दिया गया था, 1694 ईंसवी स में रसमंजरी चित्रों के रूप में लघु चित्रकला का निष्पादन किया था । रसमंजरी लघु चित्रकलाओं की एक अन्य श्रृंखला है जिसे समान शैली में और लगभग समा अवधि में तैयार किया गया था लेकिन ऐसा प्रतीत होता है कि ऐसा किसी अन्य व्यक्ति ने किया था । रसमंजरी की दो श्रृंखलाओं के सचित्र उदाहरण भारत औ विदेशों के अनेक संग्रहालयों में बिखरे पड़े हैं । चित्रकला की बशोली शैली की विशेषता प्रभावशाली तथा सुस्पष्ट रेखा और प्रभावशाली चमकीले वर्ण हैं । बशोल शैली विभिन्न पड़ोसी राज्यों तक फैली और अठारहवीं शताब्दी के मध्य तक जारी रही ।

1730 ईसवी सन् में कलाकार मनकू द्वारा चित्रित की गईं गीतगोविन्द की एक श्रृंखला का एक सचित्र उदाहरण बशोली शैली के आगे विकास को दर्शाता है । य चित्रकला राष्ट्रीय संग्रहालय के संग्रह में उपलब्ध है और एक नदी के किनारे पर एक उपवन में कृष्ण को गोपियों के साथ चित्रित करती है ।

मुखाकृति शैली में एक परिवर्तन आया है जो कुछ भारी हो गया है । साथ ही वृक्षों के रूपों में भी परिवर्तन आया है जिसमें कुछ-कुछ प्राकृतिक विशेषता को अप लिया है । ऐसा मुगल चित्रकला के प्रभाव के कारण हो सकता है । बशोली शैली के प्रभावशाली तथा विषम वर्णों के प्रयोग, एकवर्णीय पृष्ठभूमि, बड़ी-बड़ी आंख

मोटा व ठोस आरेखण, आभूषणों में हीरों को दिखाने के लिए बाहर निकले हुए पंखों के प्रयोग, तंग आकाश और लाल किनारा जैसी सामान्य विशेषताएं इस ल चित्रकला में भी देखी जा सकती हैं ।

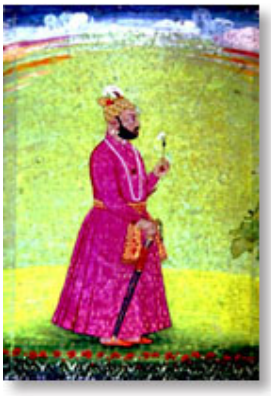

गुलेर के राजा बिशन सिंह का चित्र, चित्रकला की पहाड़ी शैली

2. गुलेर

बशोली शैली के अन्तिम चरण के पश्चात चित्रकलाओं के जम्मू समूह का उद्भव हुआ जिसमें मूल रूप से गुलेर से संबंध रख नैनसुख द्वारा जसरोटा (जम्मू के निकट एक छोटा स्थान) के राजा बलवन्त सिंह की प्रतिकृतियां शामिल हैं । उसने जसरोटा नई प्राकृतिक तथा कोमल शैली में हैं जो बोसोहली कला की प्रारम्भिक परम्पगराओं में एक परिवर्तन का द्योतक है । प्रयुक्त शैली मोहम्मद शाह के समय की मुगल चित्रकला की प्राकृतिक शैली से प्रभावित हुई है ।

पहाड़ी क्षेत्र के एक अन्य राज्य में गुलेर में लगभग 1750 ईसवीं सन् में जसरोट के बलवन्त सिंह की प्रतिकृति से घनिष्ठ संबंध की अनेक प्रतिकृतियों का निष्पादन किया गया था । इन्हें कोमलता से बनाया गया है और ये चमकीली तथा भड़कीली रंगपट्टी से

पहाड़ी क्षेत्र में सृजित लघु चित्रकलाओं का सर्वोत्तम समूह भागवत की सुप्रसिद्ध श्रृंखला, गीत गोविन्द, बिहारी सतसई, बारह रंगमाला का प्रतिनिधित्व करती हैं । चित्रकला की इन श्रृंखलाओं के उद्गम का ठीक-ठीक स्थान ज्ञात नहीं है । इन्हें या तो गुले पर चित्रित किया गया होगा । भागवत और अन्य श्रृंखलाओं सहित गुलेर प्रतिकृतियों को गुलेर प्रतिकृतियों की शैली के आधार प समूहबद्ध किया गया है । इन चित्रकलाओं की शैली प्रकृतिवादी, सुकोमल और गीतात्मक है । इन चित्रकलाओं में महिला अ चेहरे, छोटी और उल्टी नाक है और बालों को सूक्ष्मरूप से बांधा गया है । इस बात की पूरी-पूरी संभावना है कि इन चित्रक उसके कुशल सहयोगी ने निष्पादित किया होगा ।

3. कांगड़ा

गुलेर शैली के पश्चात् 'कांगड़ा शैली' नामक एक चित्रकला की एक अन्य शैली का उद्गम अठारहवीं शताब्दी के अन्तिम चतुर्थांश में हुआ जो पहाड़ी चित्रकला तृतीय चरण का प्रतिनिधित्व करती है । कांगड़ा शैली का विकास गुलेर शैली से हुआ । इसमें गुलेर शैली की आरेखण में कोमलता और प्रकृतिवाद की गुणव जैसी प्रमुख विशेषताएं निहित हैं । चित्रकला के इस समूह को कांगड़ा शैली का नाम इसलिए दिया गया क्योंकि ये कांगड़ा के राजा संसार चन्द की प्रतिकृति शैली के समान है । इन चित्रकलाओं में, पार्श्विका में महिलाओं के चेहरों पर नाक लगभग माथे की सीध में हैं, नेत्र लम्बे तथा तिरछे हैं और ठुड्डी नुकीली है, तथा आकृतियों का कोई प्रतिरूपण नही है और बालों को एक सपाट समूह माना गया है, कांगड़ा शैली कांगड़ा, गुलेर, बशोली, चम्बा, जम्मू , नूरपुर, गढ़वाल, अ विभिन्न स्थानों पर उन्नति करती रही । कांगड़ा शैली की चित्रकलाओं का श्रेय मुख्य रूप से नैनसुख परिवार को जाता है । कुछ पहाड़ी चित्रकारों को पंजाब महाराजा रणजीत सिंह और उन्नीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ में सिख अभिजात वर्ग का संरक्षण मिला था तथा कांगड़ा शैली के आशोधित रूप में प्रतिकृतियों और अन्य लघु चित्रकलाओं का निष्पादन किया था जो उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य तक जारी रहा ।

स्त्री और सारस कुल्लू-मंडी चित्रकला की राजस्थान शैली

4. कुल्लू -मण्डीय

पहाड़ी क्षेत्र में प्रकृतिवादी कांगड़ा शैली के साथ-साथ, कुल्लू-मण्डी क्षेत्र में चित्रकला की एक लोक शैली ने भी उन्नति की तथा इस शैली की विशेषता मजबूत एवं प्रभावशाली आरेखण और गाढ़े तथा हल्के रंगों का प्रयोग करना हैं । हालांकि कुछ मामलों इस शैली ने अपनी विशिष्ट शास्त्रीय विशेषता को बनाए रखा है । कुल्लू और मण्डी के शासकों की बड़ी संख्यन में प्रतिकृति उपलब्ध हैं ।

राष्ट्रीय संग्रहालय के संग्रह में भागवत की श्रृंखला से एक लघु चित्रकला को 1794 ईसवीं सन् में श्री भगवान ने चित्रित किया अंगुली पर गोवर्धन पर्वत को उठाए हुए दिखाया गया है, ताकि गोकुल वासियों को इन्द्र के क्रोध से बचाया जा सके क्योंकि वे बिन्दुं रेखाओं के रूप में वर्षा को पृष्ठभूमि में दिखाया गया है, आकृतियों का आरेखण ठोस रूप में है । चित्रकला में किनारे पीले कुल्लू चित्रकला का एक अन्य उदारहण भी है जिसमें दो युवतियां पतंग उड़ा रही हैं । यह लघु चित्रकला अठारहवीं शताब्दी क हल्की वर्ण योजना इसकी विशेषताएं हैं । पृष्ठभूमि हल्की नीले रंग की है । युवतियों ने प्ररूपी परिधान और आभूषण पहने उड़ते हुए तोते आकाश को प्रतीकात्मक रूप में दर्शाते हैं । इस लघु चित्रकला का संबंध राष्ट्रीय संग्रहालय के संग्रह से है ।

VI. ओड़िशा

ओडिशा में लघु चित्रकला के प्रारम्भिक जीवित उदाहरणों का सत्रहवीं शताब्दी ईसवी सन् से संबंध प्रतीत होता है । इस समय की चित्रकलाओं के कुछ अच्छे उदाहरण हैं- आशुतोष संग्रहालय में एक राजदरबार का दृश्य और गीत गोविन्द की पाण्डुलिपि के सचित्र उदाहरण के चार पत्रक और राष्ट्रीय संग्रहालय में

रामायण की ताड़-पत्ते पर एक सचित्र पाण्डुलिपि और राष्ट्रीय संग्रहालय में गीत गोविन्द की कागज पर एक पाण्डुलिपि, ओडिशी चित्रकला के अठारहवीं शताब्दी के उदाहरण हैं । ओडिशा में ताड़ के पत्ते का प्रयोग उन्नीसवीं शताब्दी तक होता रहा था । बहिर्रेखा के आरेखण को ताड़ के पत्ते पर एक सुई से चित्रित किया गया और फिर चित्र पर काठ कोयला या स्याही को रगड़ कर चित्र को उभारा गया । अभिकल्पों को भरने के लिए कुछ रंगों का प्रयोग किया गया था तथापि कागज पर चित्रकला करने की यह तकनीक भिन्न थी पर चित्रकला के अन्य विद्यालयों द्वारा प्रयुक्त तकनीक के समान थी । प्रारम्भिक पाण्डुलिपियां आरेखण में स्वच्छता को दर्शाती हैं । बाद में अठारहवीं शताब्दी में यह रेखा मोटी और कच्ची हो जाती है लेकिन शैली सामान्य रूप से अति सजावटी तथा अलंकारी हो जाती है ।

राष्ट्रीय संग्रहालय के संग्रह में लगभग 1800 ईसवी सन् की गीत गोविन्द की एक शृंखला में एक सचित्र उदाहरण राधा और कृष्ण को चित्रित करता है । वे एक लाल पृष्ठभूमि में एक कमजोर वृक्ष की इकहरी शाखाओं के नीचे आमने-सामने खड़े हैं । शैली अति अलंकृत है और सुदृढ़ आरेखण, वृक्ष का रूढ़ अंकन, आकृतियों का भारी अलंकरण और खूबसूरत चमकीली रंग योजनाओं का प्रयोग करना इसकी विशेषताएं हैं । संस्कृत लेख सबसे ऊपर है ।

तकनीक

चित्रकलाओं का निष्पादन परम्परागत चित्रकला तकनीक से किया गया था । रंगों को सटीक माध्यम के साथ जल में मिश्रित करने के पश्चात् इन्हें रेखाचित्र पर ल
स्वतंत्र रूप से तैयार किया जाता था और उसके ऊपर सफेद रंग लगाया जाता था । सतह को तब तक भली-भांति चमकाया जाता था, जब तक कि इसमें से
बढ़िया कूंची की सहायता से एक दूसरी बहिर्रेखा खींची जाती थी । पहले पृष्ठ भूमि पर रंग किया जाता था और तत्पश्चात् आकाश, भवन और वृक्ष आदि की आकृ
एक अन्तिम बहिर्रेखा खींची जाती थी । जब काठकोयले के चूरे को रगड़ कर छिद्रित खाकों की प्रतियां तैयार की जाती थी तब तक प्रथम आरेखण का स्थान ब
खनिजों और गेरुओं से लिए गए थे । नीला वनस्पति रंग था । लाक्षा-रंजन और लाल कृमिज कीड़ों से लिए गए थे । दग्ध शंख और सफेदा श्वेत वर्ण के रूप म
प्रयोग किए गए थे । गेरू, सिंदूर लाक्षा-रंजन और लाल कृमिज लाल रंग के रूप में प्रयोग किए गए थे । नील और लाजवर्द नीले के लिए प्रयोग किए गए थे
वाली गायों के मूत्र से निकाला गया) पीले रंग के लिए प्रयोग किए गए थे । चांदी और सोने का प्रयोग भी किया गया था । टेरावर्टे, मैलकाइट (जंगल) का प्रयो
मिश्रित करके भी प्राप्त किया जाता था । रंगों में बबूल गोंद ओर नीम गोंद का प्रयोग बंधनकारी माध्यम के रूप में किया जाता था । पशु के बाल से कूंची बनाई ज
थी । एक बाल की कूची सबसे अच्छा होता था । ताड़ के पत्ते और कागज के अतिरिक्त, काष्ठ और वस्त्र का प्रयोग भी चित्रकला के लिए सामग्री के रूप में किया
अठारहवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध के पश्चात परम्परागत भारतीय चित्रकला में गिरावट आनी प्रारम्भ हो गई थी और इस शताब्दी के अन्त तक इसने अपनी अधिकांश
क्षेत्र में चित्रकला ने अपनी गुणवत्ता को उन्नीसवीं शताब्दी के चतुर्थांश तक बनाए रखा था । चित्रकला के पश्चिमी वर्णों और तकनीक के प्रभाव के कारण भारतीय
उत्तरार्द्ध में अन्तत: समाप्त हो गई थीं ।

प्रकाशनाधिकार © सांस्कृतिक स्रोत एवं प्रशिक्षण केन्द्र
15 ए, सैक्टर-7, द्वारका, नई दिल्ली-110075
संस्कृति मंत्रालय, भारत सरकार
दूरभाष नं0 (011) 25088638, 25309300, फैक्स 91-11-25088637, ई-मेल dir.ccrt@nic